Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 3 | ISSN : 2581- 6306

महाभारत के प्रमुख ऋषि

डॉ0 जी.एल. पाटीदार[1], रिपन कुमार[2]

[1]सहायक आचार्य, संस्कृत-विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

[2]सहायक आचार्य, लालबहादुरशास्त्री राजकीय महाविद्यालय, सरस्वती नगर, शिमला (हिमाचल प्रदेश)

शोधसार- इस लघुलेख का उद्देश्य महाभारत कालीन ऋषि परम्परा को समझना, महत्ता को प्रतिपादित करना, साधारण जनमानस के समक्ष ऋषि अधिकार कर्त्तव्यों को उद्घाटित करना, महाभारत कालीन एवं वर्तमान कालीन ऋषि परम्परा का स्थान स्थापित करना, तथा साथ ही वर्तमान सामाजिक जीवन में ऋषि परम्परा संबन्धों का स्थान निर्धारण करना ही मुख्य उद्देश्य हैं। जिससे समाज में ऋषि-महर्षियों के प्रति जानकारी प्राप्त हो सकेगी, जिसे सामान्य जन इनकी जीवनियों को सुनकर पढ़कर अपने जीवन में आत्मसात कर जीवन को गुणकारी-सरस-सुगम बना सकें। मानव के वर्त्तमान अस्तित्व को खतरें में देख कर आचरण धर्म की प्रधानता ओर अधिक बड़ जाती है, इस आचरण धर्म का पाठ आचार्य ही पढ़ा सकता है, आज राजा तो है पर ऋषि नहीं है इसी कारण राजसत्ता भी खतरें में ही दिख रहीं है। राजा के गलत निर्णयों पर बोलने वाला महर्षि आज अदृश्य है, इसीलिए राजसता अहंकारयुक्त हो गयी है। सर्वत्र स्वार्थ लिप्सा के कारण संकट में लिए गए निर्णय भी दूषित हो रहें है, क्योकि निस्वार्थ निर्णय करने वाले ऋषियों का अभाव सा है। तप सत्य का ज्ञाता और निर्भीक ही ऋषि है। अनादि काल से हजारों संकटों के बाद भी मानव धर्म बच गया है, इन्हीं ऋषिओं के तप के कारण पर आज सम्पूर्ण जीव धर्म संकट में है। आओं पृथ्वी, ऋषि और सत्य को बचाने का प्रयास करते है।

कूटशब्द- साहित्य, वेद, संस्कृत, ऋषि, महर्षि, शिष्य, गुरु, महाभारत, जय, वेदव्यास ।

ऋषि का अर्थ एवं उत्पत्ति

भारतीय परम्परा में ऋषि श्रुति ग्रन्थों के दर्शन करने वाले अर्थात् यथार्थ ज्ञान को समझने वाले परमतपस्वियों को कहा जाता है। श्रुति, सत्य और तप में पूर्णतः निरत मन्त्रद्रष्टा 'ऋषि' कहलाते हैं। जिन्होंने ईश्वरीय ज्ञान वेद का साक्षात्कार किया, वे ही ऋषि थे। इसीलिए यास्क ने **'ऋषिर्दर्शनात्'** कहा। वायुपुराण के अनुसार इनके अनेक भेद हैं। जैसे- परमर्षि, ऋषिता, महर्षि, ऋषिक, ऋषिपुत्रक, श्रुतर्षि एवं ऋषि जाति। श्रीमद्भागवत पुराण के अनुसार ऋषियों ने आदिराजा पृथु को आशीर्वाद दिया था।

श्रीकृष्णावतार के समय ऋषियों ने गौ के रूप में अवतार लिया था। वायुपुराण के अनुसार वैवस्वत मन्वन्तर के सात ऋषि थे- विश्वामित्र, जमदग्नि, भरद्वाज, शरद्वान्, अत्रि, वसुमान् तथा वत्सार कश्यप। महाभारत में दिए गए सप्तर्षियों के नाम ये है-(1)मरीचि (2) अत्रि (3) अंगिरा (4) पुलह (5) क्रतु (6) पुलस्त्य और (7) वसिष्ठ । आधुनिक बातचीत में मुनि, योगी, सन्त इनके पर्याय नाम है। 'ऋषि' शब्द की व्युत्पत्ति 'ऋष' है जिसका अर्थ 'देखना' होता है। महाभारत के कुछ विख्यात ऋषि निम्न है- जिनका विस्तार से विवेचन किया जाएगा- (1) वसिष्ठ, (2) विश्वामित्र (3) गौतम (4) वेदव्यास (5) भीष्म (6) कृष्ण (7) द्रोणाचार्य (8) काश्यप (9) अत्रि (10) महर्षि पुलस्त्य (11) भारद्वाज।

महाभारत में प्रमुख ऋषि

यहाँ पर महाभारत के प्रमुख ऋषियों का संक्षिप्त परिचय एवं उनके योगदान विषय पर मंथन चिंतन किया जा रहा है।

(1) महर्षि वेदव्यास

पराशर पुत्र वेद व्यास महाभारत के प्रणेता और पुराणों के रचनाकार के रूप में विख्यात है। देवीभागवत में उल्लेख है कि कृष्ण द्वैपायन वेदव्यास से पूर्व 28 व्यास थे, जिसमें प्रथम व्यास स्वयं ब्रह्माजी थे। और 28वें स्वयं वेदव्यास। त्रेता युग के पश्चात् द्वापर युग का प्रतिनिधित्व वेदव्यास जी करते हैं। व्यास, वाल्मीकि के बाद में हुए, महाभारत के पूर्व में ही रामायण की रचना हो चुकी थी। महाभारत के वनपर्व में 18 अध्यायों में ''रामोपाख्यान'' पर्व है, जिसमें संक्षेप में राम कथा वर्णित है। जिससे सिद्ध होता है कि महाभारत रामायण के पश्चात् लिखा गया है। *एवं द्वैपायनो जज्ञे सत्यवत्यां पाराशरात् । न्यस्तौ द्वीपे स यद् बालस्तस्माद् द्वैपायन स्मृतः ।।*[i] अर्थात् महर्षि पराशर द्वारा सत्यवती के गर्भ से द्वैपायन व्यास जी का जन्म हुआ। वे बाल्यकाल में ही यमुना के द्वीप में छोड़ दिए गए, इसलिए 'द्वैपायन' नाम से प्रसिद्ध हुए।

अधिकांश साक्ष्य इन्हें पराशर मुनि एवं सत्यवती का पुत्र सिद्ध करते हैं। ब्रह्मा पुराण में व्यास जी का उल्लेख पराशर पुत्र के रूप में है। वायु पुराण में भी पराशर के पुत्र के रूप में है। कर्म पुराण में भी इन्हें पराशर का पुत्र कृष्ण द्वैपायन व्यास कहा गया है। देवीभागवत में पराशर और सत्यवती पुत्र व्यास का उल्लेख है। वायु पुराण व पद्मपुराण में व्यास सत्यवती के पुत्र कहे गए है-

महाभारत में वेद व्यास ने स्वयं अपना परिचय दिया, ऋषि पराशर के पुत्र वेद व्यास जी थे पराशर के पिता 'शक्ति' और माता का नाम 'अदृश्यन्ती' था, वसिष्ठ पराशर के दादा थे- ब्रह्माजी ने कहा- *तपोविशिष्टादपि वै विशिष्टामुनिसंचयात् । मन्ये श्रेष्ठतरं त्वां वै रहस्य ज्ञान वेदनात् ।।*[ii] अर्थात्-

व्यासजी ! संसार में विशिष्ट तपस्या और विशिष्ट कुल के कारण जितने भी श्रेष्ठ ऋषि-मुनि हुए है, उनमें मैं तुम्हें सर्वश्रेष्ठ समझता हूँ, क्योंकि जगत् जीव और ईश्वर-तत्त्व का जो ज्ञान है, उसके ज्ञाता हो। *एव द्वैपायनो जज्ञे सत्यवत्यां पाराशरात् ।*

न्यस्तो द्वीपे स यद् बालस्तस्माद द्वैपायन स्मृतः ।।[iii]

“महर्षि व्यास जी का जन्म एक द्वीप के अन्दर हुआ था और वर्ण श्याम था इसी कारण ‘कृष्ण द्वैपायन‘ कहलाए, वेदों के विस्तार के कारण ‘वेद व्यास‘ और बदरीवन में निवास करने के कारण ‘बादरायण‘ भी कहे गए। वेदों के विस्तार के साथ महाभारत, 18 महापुराणों तथा ब्रह्मसूत्र का भी प्रणयन किया।”[iv] महर्षि व्यास त्रिकाल दर्शी थे उन्होंने एकचक्रा नगरी में रह रहे पाण्डवों को एवं पाञ्चाल नरेश द्रुपद को द्रौपदी के विवाह का वृतान्त पहले से ही बता दिया था।

त्रयोदश समा राजन्नुत्पातानां फलं महत् ।
सर्वक्षत्र विनाशाय भविष्यति विशाम्पते ।।[v]

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में पधारे व्यासजी ने युधिष्ठिर को बता दिया था कि आज से तेरह वर्ष बाद क्षत्रियों का महासंग्राम होगा। पाण्डवों की विजय होगी।

एष ने संजयो राजन् युद्धमेतद् वदिष्यति ।
एतस्य सर्वसंग्रामे न परोक्षं भविष्यति ।।[vi]

भगवान् वेदव्यास जी ने संजय को दिव्य दृष्टि प्रदान की, संजय ने धृतराष्ट्र को आँखों देखा हाल बताया।

एक बार जब धृतराष्ट्र वन में निवासरत थे तब उनसे मिलने युधिष्ठिर सपरिवार आए, उसी समय व्यासजी भी वहाँ आ गए धृतराष्ट्र ने व्यासजी से आग्रह किया कि युद्ध में वीर पुत्रों की क्या गति हुई ? तब व्यास जी ने गंगा में खड़े होकर वीरों का आहवान किया और धृतराष्ट्र को दर्शन कराया। ऐसे- त्रिकाल दर्शी भगवान ‘‘कृष्ण द्वैपायन‘‘ वेदव्यासजी को शत-शत नमन हैं।

(2) भगवान् श्रीकृष्ण (महाभारत के नायक)

महाभारत के प्रारम्भ में महर्षि वेदव्यास जी ने भगवान श्री नारायण का मंगलाचरण द्वारा ही शुभारम्भ किया है-

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैवं नरोतमम् ।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ।।[vii]

भगवान की वन्दना करने के बाद वेदव्यास जी ने इन्हें इस महायुद्ध के महानायक, महाभारत के प्रधान योद्धा कहा है।

महाभारत के आदिपर्व में श्रीकृष्ण का प्रथम दर्शन द्रौपदी के स्वयंवर के समय होता है, जब पाण्डव द्रौपदी को जीतकर अपने साथ ले जा रहे थे तब अन्य राजागण उनका विरोध करते हैं तभी भगवान श्रीकृष्ण उन्हें धर्म की बातें बताकर रोक देते हैं और पाण्डव द्रौपदी को लेकर चले जाते हैं।

एष ह्येषां समस्तानां तेजोबलपराक्रमैः ।
मध्ये तपन्निषाभाति ज्योतिषामिव भास्करः ।।
असूर्यमिव सूर्येण निर्वातमिव वायुना।
भासितं ह्यदितं चैव कृष्णेनेदं सदो हि नः ।।[viii]

एक बार जब धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह प्रश्न उठा की सबसे पहले किसकी पूजा की जाए तो भीष्म ने सब कुछ सोचने के बाद कृष्ण का नाम लिया और कहा कि कृष्ण ही इसके योग्य हैं।

स उपालभ्य भीष्मं च धर्मराजं च संसदि ।
अपाक्षिपद् वासुदेवं चेदिराजो महाबलः ।।[ix]

तब चेदिराज शिशुपाल पहले तो पितामह भीष्म को और बाद में श्रीकृष्ण को खरी-खोटी भरी सभा में सुनाने लगा।

शृण्वन्तु में महीपाला येनैतत् क्षमितं मया ।
अपराधशतं क्षाम्यं मातुरस्यैव याचने ।।
दत्तं मया याचितं च तानि पूर्णानि पार्थिवाः ।
अधुना वद्ययिष्यामि पश्यतां वो महीक्षिताम् ।।[x]

श्रीकृष्ण और पूरी सभा सुनती रही और जब अपराध पूरे होने तक श्रीकृष्ण ने सहन किया।

एव मुक्त्वा यदुश्रेष्ठश्चेदिराजस्य तत्क्षणात् ।
व्य पाहरच्छिरः क्रुद्धश्चक्रेणामित्रकर्षणः ।।[xi]

जैसे ही 101 गाली जब श्रीकृष्ण को दी जा रही थी तब सीमा पार होने पर श्रीकृष्ण ने भरी सभा में अपने सुदर्शन चक्र से शिशुपाल का सिर धड़ से अलग कर दिया,धड़ से दीव्य पुंज निकला और श्रीकृष्ण में समा गया।

यत् ते दैवं परं सत्वं यच्च ते मातरिश्वनः ।
बलं भीम जरासंधे दर्शयाशुतदद्य नः ।।[xii]

भगवान श्रीकृष्ण पाण्डवों के हर क्षण रक्षक बने। उन्हीं की रक्षा से भीमसेन के द्वारा जरासन्ध मारा गया और यज्ञ सम्पन्न हुआ।

अर्थात् श्रीकृष्ण भीम से कहते हैं कि- 'भीम ! तुम्हारा जो दैवी स्वरूप है और तुम्हें वायुदेवता से जो दिव्य बल प्राप्त हुआ हैं, उसे आज हमारे सामने जरासन्ध पर शीघ्रतापूर्वक दिखाओ।'' तब भगवान श्रीकृष्ण ने जरासन्ध का वध कराने की इच्छा से भीम सेन -

भीमसेन समालोक्यनलं जग्राह पाणिना ।
द्विधा विच्छेद वै तत् तु जरासंधवद्यं प्रति ।।[xiii]

कि ओर देखकर एक 'नरकट' हाथ में ले लिया। और उसे दो टुकड़ों में चीर डाला। यह जरासंघ को मारने के लिए एक संकेत था।

याज्ञसेन्या वचः श्रुत्वा कृष्णो गह्वरितोऽभवत् ।
त्यक्त्वा शय्याऽऽसनं पद्भ्यां कृपालुः कृपयाभ्यगात् ।।[xiv]

द्यूत-क्रीडा में जब पाण्डव हार गए और कुत्सित पुत्र दुःशासन द्वारा द्रौपदी को भरी सभा में वस्त्र हरण किया जा रहा था तब भी द्रौपदी द्वारा पुकारे जाने पर श्रीकृष्ण ने वस्त्रावतार धारण कर द्रौपदी की लाज बचाई थी।

'सूयोधनोऽयं स्वजनावमानं पराक्रमं पश्यति वालिशत्वात् ।
को नाम लोके स्वयमात्मदोषमुदघाटयेन्नष्टघृणः सभासु ।।[xv]

महाभारत के संग्राम को रोकने के लिए भगवान स्वयं शान्तिदूत बनकर कौरवों को समझाने गए परन्तु कौरव नरेश दूर्योधन के अहंकार के कारण युद्धारम्भ हुआ और श्रीकृष्ण अर्जुन के सारथी बनकर आचार्य द्रोण, भीष्म, कर्ण आदि वीरों से पाण्ड़वों की रक्षा करते रहे। संग्राम के मध्य में उन्होंने (श्रीकृष्ण) ने अर्जुन के माध्यम से विश्व को गीतारूपी रत्न प्रदान किया।

(3) भीष्म पितामह

तथा भीष्मःशान्तनवो गङ्गायाममितद्युतिः ।
वसुवीर्यात् समभवन्महावीर्यो महायशा ।।[xvi]

देवव्रत के पिता का नाम शान्तनु था और माता का नाम गंगा था, शान्तनु की दो रानियाँ थी पहलीं रानी-गंगा एवं दूसरी रानी का नाम-सत्यवती था। गुरु का नाम-वसिष्ठ था।

राजा शान्तनु ने गंगा को सुन्दर युवती के रूप में नदी के तट पर खड़ी देखी, राजा मोहित हो गया, रानी भी राजा पर मोहित हो गई। गंगा ने राजा को पत्नी रूप में स्वीकारने के लिए कहा । राजा ने स्वीकार कर ली। लेकिन रानी ने शर्त रखी, राजा ने सम्पूर्ण शर्त मान ली।

गंगा सन्तान को पैदा होते ही नदी में बहा देती थी यह सिलसिला सातवीं संतान तक चलता रहा आठवीं संतान को जैसे ही रानी फेंकने के लिए ले जा रही थी तब राजा से न रहा गया और राजा ने उसे रोका। तब रानी ने कहा ठीक है मैं इसे नदी में नहीं फेंकुगी पर इसे मैं अपने साथ ले जाकर कुछ दिन पालुंगी और फिर आपको पुरस्कार के रूप में सौंप दूँगी। यही बच्चा आगे चलकर भीष्म पितामह के नाम से विख्यात हुआ।

एक दिन राजा शिकार खेलते-खेलते गंगा नदी के तट तक जा पहुँचे, वहाँ उन्होंने एक बालक को देखा जो अपने बाणों से नदी की धारा को रोके हुए था यह देखकर शान्तनु दंग रह गए। उसी क्षण गंगा प्रकट हुई गंगा ने बालक को अपने पास बुलाया और राजा से कहा कि ‘‘मुझे और बालक को पहचाना‘‘ यह वही आठवाँ पुत्र देवव्रत है और मैं गंगा।

गुरु वसिष्ठ ने इसे शिक्षा दी है। रानी ने देवव्रत को राजा को सौंप दिया। यह वही देवव्रत है जो आगे चलकर अपनी प्रतिज्ञा के कारण भीष्म-पितामह के नाम से विख्यात हुआ।[xvii]

राजा गंगा से वियोग प्राप्त था उसी क्षण शान्तनु घुमते-घुमते यमुना तट पर पहुँच गए वहाँ पर अप्सरा सी सुन्दर एक तरुणी को देखा उसका नाम सत्यवती था। राजा के मन में तरुणी को पत्नी बनाने की इच्छा बलवती हो गई। तरुणी ने कहा मेरे पिता जो कि मल्लाहों के सरदार है पहले उनसे अनुमति लीजिए। फिर मैं आपकी पत्नी बनने को तैयार हूँ। सत्यवती के पिता केवटराज ने राजा से वचन मांगा कि- सत्यवती का जो पुत्र होगा वही आपके बाद हस्तीनापुर के राज-सिंहासन पर बैठेगा।

केवट राजा की शर्त राजा शान्तनु को नागवार लगी। गंगा-पुत्र के अलावा किसी को राजगद्दी पर बिठाने की कल्पना तक उनसे न हो सकी। राजा को चिंता उनके मन को कीडे की तरह कुतर-कुतरकर खाने लगी।

पिता के उदास मन को देखकर देवव्रत ने पूछा कि पिताजी संसार के सारे सुख आपको प्राप्त है फिर आप चिंतित क्यों हो ? राजा ने गोलमाल जवाब दिया, पर देवव्रत को समझते देर न लगी, उन्होंने राजा के सारथी से सारी कथा कहलवा ली। पिताजी के मन की व्यथा जानकर देवव्रत सीधे केवटराज के पास गए और कहा कि आप अपनी पुत्री का विवाह महाराज शान्तनु से कर दें। केवटराज ने शर्त दोहराई देवव्रत ने कहा-

यदि तुम्हारी आपति का कारण यही है तो मैं वचन देता हूँ कि ‘‘मैं राज्य का लोभ नहीं करूँगा। सत्यवती का पुत्र ही मेरे पिता के बाद राजा बनेगा। केवटराज को संतुष्टि नहीं हुई, उन्होंने कहा आपके पुत्र से मैं वैसी आशा कैसे रख सकता हूँ ? तब देवव्रत ने गंभीर स्वर में उनसे यह कहा- ‘‘मैं जीवन भर विवाह नहीं करूँगा। आजन्म ब्रह्मचारी रहूँगा।‘‘ इसी भयंकर प्रतिज्ञा के कारण उनका नाम ‘भीष्म‘ पड़ गया। पुत्र की प्रतिज्ञा से प्रसन्न पिता ने इच्छामृत्यु का वरदान दिया।

केवटराज ने अपनी पुत्री को देवव्रत के साथ सानन्द विदा किया सत्यवती से शान्तनु के दो पुत्र हुए- चित्रांगद और विचित्रवीर्य। शान्तनु के बाद चित्रांगद राज सिंहासन पर बैठा पर युद्ध में मारे जाने के कारण विचित्रवीर्य ने गद्दी संभाली। विचित्रवीर्य की दो रानियाँ थी। अंबिका और अंबालिका। अंबिका से धृतराष्ट्र और अंबालिका से पांडु पैदा हुए। धृतराष्ट्र के पुत्र कौरव एवं पांडु के पाण्डव कहलाए।[xviii]

(4) ऋषि द्रोणाचार्य

भरद्वाजस्य च स्कन्नं द्रोण्यां शुक्रमवर्धत ।
महर्षेरुग्रतपसस्तस्माद् द्रोणो व्यजायत ।।[xix]

अर्थात् एक समय उग्रतपस्वी महर्षि भरद्वाज का वीर्य किसी द्रोणी (पर्वत की गुफा) में स्खलित होकर धीरे-धीरे पुष्ट होने लगा उसी से द्रोण का जन्म हुआ।

गौतमान्मिथुनं जज्ञे शरस्तम्बाच्छरद्वतः ।
अश्वत्थाम्नश्च जननी कृपश्चैव महाबलः ।।[xx]

किसी समय गौतम गोत्रीय शरद्वान् का वीर्य सरकंडे के समूह पर गिरा और दो भागों में बट गया। उसी से एक कन्या और पुत्र का जन्म हुआ। कन्या का नाम कृपी था, जो अश्वत्थामा की जननी हुई। पुत्र महाबली कृप के नाम से विख्यात हुआ।

अश्वत्थामा ततो जज्ञे द्रोणादेव महाबलः।[xxi]

तदनन्तर द्रोणाचार्य से महाबली अश्वत्थामा का जन्म हुआ।

स तांशिष्यान् महेष्वासः। प्रतिजग्राह कौरवान् ।
पाण्डवान् धार्तराष्ट्रांश्च द्रोणो मुदितमानसः ।।[xxii]

महाधनुर्धर आचार्य द्रोण ने प्रसन्नचित्त होकर उन धृतराष्ट्र-पुत्रों तथा पाण्डवों को शिष्य रूप में ग्रहण किया। अर्थात् द्रोणाचार्य कौरवों एवं पाण्डवों के गुरु नियुक्त किए गए। अन्य के नहीं।

तमब्रवीत् त्वयाङ्गुष्ठो दक्षिणो दीयतामिति ।[xxiii]

द्रोणाचार्य एकलव्य से कहते हैं कि ‘‘तुम मुझे दाहिने हाथ का अंगूठा दे दो‘‘ एकलव्य गुरु की आज्ञा सुनकर।

एकलव्यस्तु तच्छुत्वा वचो द्रोणस्य दारुणम् ।
प्रतिज्ञामात्मनो रक्षन् सत्ये च नियतः सदा ।।
तथैव हृष्टवदनस्तथैवादीन मानसः ।
छित्वाविचार्य तं प्रादात् द्रोणायाङ्गुष्ठमात्मनः ।।[xxiv]

सदा सत्य पर अटल रहने वाले एकलव्य ने अपनी प्रतिज्ञा की रक्षा करते हुए पहले की ही भाँति प्रसन्न मुख और उदारचरित रहकर बिना कुछ सोच-विचार किए अपना दाहिना अँगूठा काटकर द्रोणाचार्य को दे दिया। यही नहीं -

कमण्डलुं च सर्वेषां प्रायच्छच्चिरकारणात् ।
पुत्राय च ददौ कुम्भमविलम्बनकारणात् ।।[xxv]

वे अन्य शिष्यों को तो पानी लाने के लिए कमण्डलु देते, जिससे उन्हें लौटने में कुछ विलम्ब हो जाए, परन्तु अपने पुत्र अश्वत्थामा को बड़े मुँह का घड़ा देते, जिससे उसको लौटने में विलम्ब न हो।

यावत् ते नोपगच्छन्ति तावदस्मै परां क्रियाम् ।
द्रोण आचष्ट पुत्राय तत् कर्म जिष्णु रौहत ।।[xxvi]

जब तक दूसरे शिष्य लौट नहीं आते, तब तक वे अपने पुत्र अश्वत्थामा को अकेले में अस्त्र-संचालन की कोई गुप्त उत्तम विधि बतलाते थे। अर्जुन ने उनके इस कार्य को जान लिया।

इस प्रकार गुरु द्रोणाचार्य सिर्फ कौरवों एवं पाण्डवों के अलावा राजपुत्र राजाओं के गुरु थे, वे पक्षपाती थे निचले स्तर के लोगों को वो शिक्षा नहीं देते थे, एकलव्य को भी उन्होंने शिक्षा नहीं दी थी यानि एकलव्य (निषादराज पुत्र) जैसा महाधनुर्धर भी निषाद (निम्न) जाति का होने के कारण उपेक्षा का शिकार हुआ।

(5) महर्षि अत्रि

अत्ति स्म एक गण्डूषेणैव सर्वमेव गंगाजलं पीतवान् ।[xxvii] इस व्युत्पत्ति से इनका नाम ‘अत्रि‘ पड़ा। इनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के नेत्र से हुई थी। सप्तर्षियों में एक विशिष्ठ ऋषि थे। श्रीमद्भागवत के अनुसार कर्दम मुनि तथा देवहूति की पुत्री अनसूया इनकी धर्मपत्नी है।

मरीचिरत्र्यागिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः ।
ब्राह्मणो मानसाः पुत्राः वसिष्ठश्चेति सप्त ते ।।[xxviii]

ये विख्यात सप्तर्षियों में एक थे। इनके तीन पुत्र थे दत्त, दुर्वासा एवं चन्द्र। श्रीमद्भागवत के अनुसार ये ब्रह्माजी के दस मानस पुत्रों में एक थे-

मरीचित्र्यागिरसौ पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ।
प्रचेतसं वसिष्ठञ्य भृगुं नारद मेव च ।।[xxix]

इनका आश्रम दण्डक वन में था। जहाँ चित्रकुट से पंचवटी जाते समय श्रीराम जानकी व लक्ष्मण सहित पधारे थे। भागवत महापुराणा के अनुसार इनके पुत्र दत्त (दत्तात्रेय) ने अलर्क तथा प्रह्लाद आदि को आन्वीक्षिकी विद्या सिखलाई थी। महाभारत के अनुसार शरशय्या पर लेटे हुए पितामह भीष्म से अत्रि मुनि भेंट करने गए थे। महाभारत युद्ध के अंत में प्रायोपवेशन के समय ये राजा परीक्षित से भेंट करने आए थे।

(6) महर्षि वसिष्ठ

'वशवतां वशिनां श्रेष्ठः' वशवत् शब्द से इष्ठन् प्रत्यय लगाने पर 'वसिष्ठ' शब्द बनता है। इसका अर्थ है- 'वरिष्ठः'। महाभारत (13/53/89) में उल्लेख मिलता है-

वशिष्ठोऽस्मि वरिष्ठोऽस्मि वशे वासगृहेष्वपि ।
वसिष्ठन्वात् वासाच्च वसिष्ठ इति विद्धि माम् ।।[xxx]

ये स्वनामख्यात ऋषि हैं। इनकी उत्पत्ति ब्रह्म के प्राणों से मानी गई है। इनकी प्रिय पत्नी का नाम 'अरुन्धती' है, जो कदर्म ऋषि की कन्या थी। श्रीमद्भागवत के मतानुसार इनके सप्तर्षि पुत्र रहे हैं।

प्रो. पाण्डुरंग वामन काणे ने अपने धर्मशास्त्र के इतिहास में वसिष्ठ के धर्मसूत्र का उल्लेख किया है, जो अनेक बार प्रकाशित हो चुका है,

"पृषोदराऽदीनि यथोपदिष्टम्"[xxxi] पाणिनि के अनुसार लोक में 'वसिष्ठ' शब्द भी प्रचलित होने के कारण शुद्ध माना गया है। 'पौराणिक कोश' के अनुसार- वसिष्ठ का उल्लेख वेदों से लेकर रामायण, महाभारत, पुराणादि सभी ग्रन्थों से मिलता है। वेदों के अनुसार ये मित्र और वरुण के पुत्र कहे गए है ऋग्वेद के अनुसार वसिष्ठ सर्वप्रथम काबुल, गान्धार की तरफ के राज्यों के शासक राजा दिवोदास के पुरोहित थे।

(7) महर्षि कश्यप या काश्यप

महर्षि का नाम प्रजापति के रूप में प्रसिद्ध रहा है जो रामायण एवं महाभारत के अनुसार श्री ब्रह्मा के पौत्र और ऋषि मरीचि के मानस पुत्र थे **"मरीचेः कश्यपः पुत्रः।"** महर्षि मरीचि की स्त्री कला के गर्भ से इनकी उत्पत्ति मानी जाती है। अदिति तथा दिति नामक इनकी दो पत्नियाँ थी दक्ष प्रजापति ने

अपनी 13 कन्याओं का विवाह भी इनसे किया था, ऐसा उल्लेख श्रीमद्भागवत, ब्रह्माण्ड पुराण, मत्स्य पुराण एवं वायुपुराण में आया है। इनकी सात प्रसिद्ध पत्नियों से सात वंश प्रवर्तित हुए। यथा 'दिति से दैत्य', अदिति से देवता, विनता से गरुड़, आदि पक्षी, कद्रू से सर्प, सुरभि से गौ, सरमा से कुक्कुट प्रजापति की तेरह कन्याओं के नाम है।

श्रीमद्भागवत एवं मत्स्य पुराण के अनुसार ये विवस्वान् के पिता थे। श्रीमद्भागवत के अनुसार ये शरशय्या पर लेटे अपनी इच्छा मृत्यु की प्रतीक्षा करते महाराज भीष्म पितामह से भेंट करने भी गए थे।

"महाभारत के वनपर्व (25/35-40) में काश्यप की सहिष्णुता की गाथाएँ उद्धत है। कश्यप तथा काश्यप दो स्वतंत्र धर्म शास्त्रकार है या एक, यह कहना कठिन मानते हुए भी श्री काणे दोनों को अभिन्न मानते हैं।"[xxxii]

(8) महर्षि विश्वामित्र

पुरुवंशी महाराज गाधि के पुत्र एक प्रसिद्ध ब्रह्मार्षि जो क्षत्रिय होते हुए भी अपने तपोबल से ब्रह्मार्षियों में परिभाषित हुए थे। इनका क्षत्रिय दशा का नाम 'विश्वरथ' था, परन्तु ब्राह्मणत्व की प्राप्ति पर ये 'विश्वामित्र' के नाम से विख्यात हुए। पुराणों के कथनानुसार महाराज गाधि की सत्यवती नामवाली पुत्री ऋचीक को ब्याही थी। महर्षि ऋचीक ने अपनी पत्नी व सास के लिए दो अलग-अलग चरु बनाए थे, परन्तु माता ने पुत्री वाला तथा पुत्री ने माता वाला चरु भक्षण कर लिया। परिणामतः सत्यवती के पुत्र जमदग्नि हुए, जो ब्राह्मण होते हुए भी क्षत्रिय गुण सम्पन्न थे। महाराज गाधि के गर्भ से विश्वामित्र हुए, जो क्षत्रिय कुल में उत्पन्न होकर भी ब्राह्मणों के सदृश गुण वाले थे। इनके शुनःशेप मधुच्छन्द धनन्जय, कृतदेव, अष्टर, कच्छप हारीत आदि 100 पुत्र हुए इनकी पत्नी का नाम सती था। इनकी तपस्या से भयभीत इन्द्र ने मेनका को इनके पास भेजा था, मेनका के गर्भ से इनको शकुन्तला की प्राप्ति हुई, जिनका विवाह राजा दुष्यंत से हुआ था तथा भरत नामक पुत्र हुआ था। राजा हरिशचन्द्र की परीक्षा लेने वाले भी यही विश्वामित्र थे।

(9). **महर्षि-गौतम**

महर्षि गौतम धर्मसूत्रकारों में सबसे प्राचीन प्रमाणित है। धर्मसूत्रों की रचना श्रौत एवं गृह्यसूत्रों से पूर्व हुई थी। परन्तु आधुनिक अनुसंधात्मक विद्वान इस मत को पूर्णरूप से नहीं मानते। उनकी धारणा तो यही है कि धर्मसूत्र, श्रौत एवं गृह्यसूत्रों के बाद की रचना थी। गौतम धर्मसूत्र के ही– *एकाश्रम्यं त्वाचार्याः / वर्णान्तरगमनमुत्कर्षापकर्षाभ्यां सप्तमे पञ्चमे वाऽऽचार्याः/* आदि उल्लेख धर्मशास्त्राचार्यो की

ओर संकेत करते है। यह तो सर्वतः प्रामाणित मत है कि सूत्रों की रचना के बाद ही अनुष्टुप् छन्द वाले धर्मग्रन्थ, जो स्मृतियाँ कहलायीं, लोक में अवतरित हुई। *गोभिर्ध्वस्तं तमो यस्य- पृषोदरादित्वात।* महाभारत में इस शब्द की निरूक्ति प्राप्त होती है।

गो दमोऽहमतोऽघूमोऽदमस्ते समदर्शनात्।
गोभिस्तमो मम ध्वस्तं जातमात्रस्य देहतः।।
विद्धि मां गोतमं कृत्ये यातुद्यानि! निबोद्य माम्।। [xxxiii]

ये ब्रहमपुत्र माने गए हैं। गया महात्म्य में तथा वायुपुराण में भी इनका उल्लेख प्राप्त होता है। न्यायदर्शन के प्रणेता धर्मसूत्रकार से भिन्न व्यक्ति थे। वैवस्वतमन्वन्तर में प्रसिद्ध सप्त ऋषियों में गौतम भी एक थे, जैसा कि हरिवंश पुराण में उल्लेख है-

अत्रिर्वसिष्ठो भगवान् कश्यपश्च महानृषिः।
गौतमश्च भरद्वाजो विश्वामित्रस्तथैव च।।
तथैव पुत्रो भगवान् ऋचीकस्य महात्मनः।
सप्तमो जमदग्निश्च ऋषयः साम्प्रतं दिवि।। [xxxiv]

कहते हैं ये ही द्वापर युग में वेदव्यास बन गए। देवी भागवत के वचन से यह कथन प्रामाणित माना जाता है- *अत्रिरेकोनविंशेऽथ गौतमस्तु ततः परम्।* [xxxv] ऐसे महर्षि गौतम का इतिहास विस्तृत एवं जटिल है सामवेद के लाट्यायन श्रौतसूत्र और द्राहयायण श्रौतसूत्र में गौतम का उल्लेख अनेक बार आया है। गोभिल गृहयसूत्र भी गौतम को प्रमाण मानता हैं वस्तुत गौतम नाम एक जातिगत नाम है और अनेक व्यक्तियों के नाम के साथ इसका प्रयोग उपलब्ध होता हैं। उदाहरण के लिए कठोपनिषद को ले। इस उपनिषद् में गौतम नाम का प्रयोग नचिकेता के पिता के लिए हुआ है। छान्दोग्योपनिषद् मे भी हारिद्रुम गौतम नाम के एक आचार्य का नाम आता है। सामवेद के वंश ब्राहमण में गौतम गोत्रवाले चार सामवेदी आचार्यो के नाम आये हैं- गातृ गौतम, सुमन्त्र बाभ्रव्य गौतम, संकर गौतम तथा स्थविर गौतम।

(10) भरद्वाज या भारद्वाज ऋषि

''पौराणिक कोश' के अनुसार भरद्वाज ममता के गर्भ से उत्पन्न उतथ्य ऋषि के पुत्र थे। उतथ्य के छोटे भाई बृहस्पति ने उतथ्यपत्नी अपनी भाभी से उसकी गर्भावस्था में उसके मना करने पर भी समागम किया था। गर्भस्थित बालक के विरोध प्रकट करने पर उसको बृहस्पति ने जन्मान्ध होने का शाप दे दिया था, अतः ममता ने पति द्वारा तलाक के भय से भरद्वाज का त्याग कर दिया था। उस समय आकाशवाणी हुई थी कि भरद्वाज अर्थात् दो से उत्पन्न बच्चे को (भर) पालो। इसीलिए ये

भरद्वाज कहलाए। इस पर भी ममता ने इन्हें त्याग दिया था इनकी पालना मरूतों ने की थी। उन्हीं ने मरूत् सोम यज्ञ के पश्चात् इन्हें दुष्यन्त पुत्र भरत को सौंप दिया था और ये क्षत्रिय हो गए।

तीर्थराज प्रयाग में गंगायमुना संगम से थोडी दूर पर इनका आश्रम था। इनके दो पुत्रियाँ थी, जिनमें एक महर्षि याज्ञवल्क्य को ब्याही थी तथा दूसरी विश्रवा मुनि की पत्नी थी, जिससे कुबेर की उत्पत्ति हुई थी। भरद्वाज आंगिरस गोत्रोत्पन्न एक वैदिक ऋषि थे। यह उल्लेख श्रीमद् भागवत मे आता है। ये गोत्रप्रवर्तक ऋषि तथा वैवस्वत मन्वन्तर के सप्त ऋषियों मे से एक थे।

महाभारत के अनुसार एक बार ये गंगा स्नान कर रहे थे कि घृताची अम्सरा को देख इनका शुक्र क्षरण हो गया। उसे उन्होंने एक द्रोण में रख दिया। इसी से आचार्य द्रोण की उत्पत्ति हुई। त्रेतायुग में लंका पर विजय करने जाते समय श्रीरामचन्द्र इनके आश्रम पर भी गए थे। श्रीराम को लौटाने के लिए जाते समय भरत भी एक रात इनके आश्रम पर रहे थे।

"द्वापर युग में ये युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में आमन्त्रित थे। शरशय्या पर लेटे पितामह भीष्म से भी ये मिले थे। प्रायोपवेशन के समय परीक्षित से भी इन्होंने भेंट की थी।"

महामहोपाध्याय परशुराम वामन काणे के अनुसार- "भारद्वाज के नाम से एक श्रौतसूत्र एवं एक गृह्यसूत्र है।

"कौटिल्य के अर्थशास्त्र से प्रकट होता है कि भारद्वाज अर्थशास्त्र के एक प्राचीन लेखक थे। कौटिल्य ने भरद्वाज का सात बार तथा कणिड्क भारद्वाज का एक बार उल्लेख किया है।"

"भारद्वाज और सौवीर के राजा शत्रुञ्जय के बीच वार्ता की चर्चा हैं। इसी पर्व में भारद्वाज को राजशास्त्र के लेखकों मे गिना गया है।"[xxxvi]

'भारद्वाज स्मृति' की मूल पाण्डुलिपि एशियाटिक सोसायटी 1 पार्कस्ट्रीट कलकता में उन्नीस अध्यायों की स्मृति सुरक्षित है।

(11) महर्षि पुलस्त्य

प्रसिद्ध सप्त ऋषियों में उल्लेखनीय एक ऋषि, जिनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के कर्णों से हुई थी। इनकी पत्नी का नाम हविभू: था। यह कर्दम ऋषि की पुत्री थी। इनके दो पुत्र हुए थे, अगस्त्य तथा विश्रवा। हरिवंश पुराण के अनुसार ये ब्रह्म के मानस पुत्र थे-

मरीचिरत्रिर्भगवानड्गिराः पुलहः क्रतुः।

पुलस्त्यश्च वसिष्ठश्च सप्तैते ब्रह्मणः सुताः।। [xxxvii]

"पौराणिक कोश" के अनुसार ये एक ऋषि थे, जो ब्रहम के दस मानस पुत्रों में से एक थे, जिनका जन्म वारूणी तनु धारण कर रहे देवाधि- देव के यज्ञ में हवन कर हरे ब्रहम के उदान अर्थात् कण्ठ देश स्थित प्राणवायु से हुआ था।"[xxxviii]

इनकी गणना सप्त ऋषियों एवं प्रजापतियों में की जाती हैं ये विश्रवा के पिता तथा कुबेर व रावण के पितामह थे।

वाल्मीकि रामायण मे उल्लेख आया है, जब राक्षसियाँ सीताजी से रावण का परिचय देती हैं-

प्रजापतीनां षण्णां तु चतुर्थोऽयं प्रजापतिः।
मानसो ब्रहमणः पुत्रः पुलस्त्य इति विश्रुतः।।
पुलस्त्यस्य तु तेजस्वी महर्षिर्मानसः सुतः।
नाम्ना स विश्रवा नाम प्रजापति समप्रभः।।
तस्य पुत्रो विशालाक्षि रावणः शत्रुरावणः।
तस्य त्वं राक्षसेन्द्रस्य भार्या भवितुमर्हसि।। [xxxix]

उत्तरकाण्ड में श्रीराम के दरबार में महर्षियों का आगमन होता है श्रीराम उनसे लंका के वीर योद्धाओं के संबंध में जानकारी प्राप्त करना चाहते है, तब महर्षि अगस्त्य, पुलस्त्य के गुणों का वर्णन करते हैं-

पुरा कृतयुगे राम ! प्रजापतिसुतः प्रभुः ।
पुलस्त्यो नाम ब्रहमर्षिः साक्षादिव पितामहः ।।
नानुकीत्या गुणास्तस्य धर्मतः शीलतस्तथा ।
प्रजापतेः पुत्र इति वक्तुं शक्यं हि नामतः ।।
प्रजापतिसुतत्वेन देवानां वल्लभो हि सः ।
दृष्टः सर्वस्य लोकस्य गुणैः शुभैः महामतिः ।। [xl]

मेरू पर्वत के पास में स्थित मुनि तृणबिन्दु के आश्रम के समीप ही महर्षि पुलस्त्य ने भी अपना आश्रम बना लिया, वह स्थान अत्यन्त रमणीय था, इसलिए समीपस्थ ऋषि कन्यायें वहाँ एकत्र होकर नृत्य गीत किया करती थी। इससे महर्षि की तपस्या में विघ्न होने लगा। कुद्ध मुनि ने शाप दे दिया कि जो भी कन्या मेरे सामने आएगी, वह गर्भवती हो जाएगी, ब्रहमशाप से भयभीत सभी कन्यायें वहां से

भाग गई परन्तु राजर्षि तृणबिन्दु की कन्या ने यह नही सुना था। वह दूसरे दिन भी वहाँ उपस्थित हो गई। किसी भी सहेली को वहाँ न पाकर वह उन्हें ढूँढती हुई महर्षि पुलस्त्य के सामने चली गई, जो वेद स्वाध्याय कर रहे थे। उनके वचनानुसार वह गर्भवती हो गई। अपना सारा वृतांत पिता को बताया, पिता ने उस कन्या को ऋषि पुलस्त्य को सौंप दी। उन्होंने (पुलस्त्य) ने उसे स्वीकार कर लिया, और उससे विश्रवा नामक पुत्र उत्पन्न हुआ-

यस्मात् ते विश्रुतो वेदस्त्वयेहाध्ययतो मम।

तस्मात् स विश्रवा नाम भविष्यति न संशयः।।

निष्कर्ष- महाभारत न केवल भारतीय संस्कृति का अपितु विश्व संस्कृति का विराट् ग्रन्थ रत्न रहा है। और भारतीय संस्कृति में ऋषियों का अहम् योगदान रहा है। वेदों में जिस ऋषि संस्कृति के बीज हमें द्रष्टव्य-श्रोतव्य होते है वे महाभारत काल में विस्तृत रूप में दिखाई देते है। जिसमें वसिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, वेदव्यास, भीष्म, कृष्ण, द्रोणाचार्य, काश्यप, अत्रि, महर्षि पुलस्त्य एवं भारद्वाज प्रमुख रहें हैं। इसप्रकार महाभारत काल में हमारी ऋषि परम्परा समृद्ध एवं संपन्न दिखाई देती है और इन ऋषियों ने जो बोद्धिक उर्वरक पिरोया इससे हमारी संस्कृति विश्व विख्यात हुई। वर्तमान में इसप्रकार के ऋषियों की परम आवश्यकता है जिससे गिरती शिक्षा व्यवस्था के स्तर को समृद्ध बनाया जा सके। और गुरु शिष्य के सम्बन्ध को सुदृढ, मधुर एवं लोकोपदेशजनक बनाया जा सके। आचार शिष्टाचार से भटकें लोगों को सन्मार्ग पर लाया जा सकें। सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था की धूरी तो केवल गुरु या ऋषि पर ही टिकी हुई हैं अतः आज इन परम तपस्वियों की महत्ता और भी बढ़ जाती हैं। राजसत्ता के परममार्ग दर्शी महर्षि है, अतः राजा और प्रजा विना ऋषि के सुखी सत्ता की कल्पना नहीं की जा सकती है। जिस दिन हम ऋषियों को राजसत्ता में परम पदवी पर विराजित कर देंगे उस दिन रामराज्य की कल्पना की जा सकती है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची

---

[i] महाभारत (आदिपर्व)- 63/86

[ii] महाभारत (आदिपर्व)- 1/71

[iii] महाभारत (आदिपर्व)- 63/86

[iv] महाभारत के प्रमुख पात्र (गीता प्रेस गोरखपुर)

[v] महाभारत (आदिपर्व)- 46/11

[vi] महाभारत (भीष्मपर्व)- 2/9

[vii] महाभारत (आदिपर्व)- 1/मंगलाचरण

[viii] महाभारत (सभापर्व)- 37/28,29

[ix] महाभारत (सभापर्व)- 37/32

[x] महाभारत (सभापर्व)- 45/23,24

[xi] महाभारत (सभापर्व)- 45/25

[xii] महाभारत (सभापर्व)- 24/4

[xiii] महाभारत (सभापर्व)- 24/5

[xiv] महाभारत (सभापर्व)- 68/45

[xv] दुतवाक्यम्- 18

[xvi] महाभारत (आदिपर्व)- 63/91

[xvii] महाभारत के प्रमुख पात्र / 7 (गीता प्रेस गोरखपुर)

[xviii] महाभारत के प्रमुख पात्र/7 (गीता प्रेस गोरखपुर)

[xix] महाभारत (आदिपर्व)- 63/106

[xx] महाभारत (आदिपर्व)- 63/107

[xxi] महाभारत (आदिपर्व)- 63/108

[xxii] महाभारत (आदिपर्व)- 131/4

[xxiii] महाभारत (आदिपर्व)- 131/56

[xxiv] महाभारत (आदिपर्व)- 131/57,58

[xxv] महाभारत (आदिपर्व)- 131/16

[xxvi] महाभारत (आदिपर्व)- 131/17

[xxvii] सप्तर्षि-स्मृति-समुच्यय- प्रकाण्ड/गद्यभाग/10

[xxviii] सप्तर्षि-स्मृति-समुच्यय- प्रकाण्ड/गद्यभाग/10

[xxix] सप्तर्षि-स्मृति-समुच्यय- प्रकाण्ड/गद्यभाग/11

[xxx] सप्तर्षि-स्मृति-समुच्यय- प्रकाण्ड/गद्यभाग/12

[xxxi] अष्टाध्यायी(पाणिनि)-6/3/109

[xxxii] महाभारत (वनपर्व)- 25/35-40

[xxxiii] महाभारत 13-93-94

[xxxiv] हरिवंश पुराण-7/34-35

[xxxv] देवीभागवत। 1/3/31

[xxxvi] महाभारत (शान्तिपर्व)। 140 अ.

[xxxvii] हरिवंशपुराण 7/4

[xxxviii] ब्रह्मण्डपुराण 2/9/-22

[xxxix] रामायण (सुन्दरकाण्ड)-23/6-8

[xl] रामायण (उत्तरकाण्ड)-2/4,5,6